Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. XV, Issue No. 6, August-2018, ISSN 2230-7540

राष्ट्रीय उत्थान के लिए स्वामी विवेकानन्द की शिक्षा की उपादेयता

Soan Kiran Sharma[1]* Dr. Mamta Sharma[2]

[1] Research Scholar, Sunrise University, Alwar, Rajasthan

[2] Professor, Sunrise University, Alwar, Rajasthan

सार – ***जिस प्रकार स्वामी जी का जीवन-दर्शन विस्तृत और समन्वयवादी है, उसी प्रकार उनका शिक्षा दर्शन भी है। वे वर्तमान शिक्षा प्रणाली के कटु आलोचक और व्यावहारिक शिक्षा के प्रबल समर्थक थे। जिसकी आजकल की परिस्थितियों में अत्यन्त आवश्यकता है। आज जबकि भारत या पूरा विश्व मूल्यों को खो देने के कगार पर है हमें विवेकानन्द की आध्यात्मिक शिक्षा की ही आवश्यकता है।***

---------------------------------x---------------------------------

आत्म निर्भरता के लिए शिक्षा:

प्रचलित शिक्षा के स्थान पर स्वामी जी भारत के लिए किस प्रकार शिक्षा चाहते हैं, इस सम्बन्ध में उनके निम्नलिखित शब्द उल्लेखनीय हैं- ‘‘हमें उस शिक्षा की आवश्यकता है, जिसके द्वारा चरित्र का निर्माण होता है, मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है, बुद्धि का विकास होता है और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो पाता है।’’[1] आज नवयुवकों में उत्तम चरित्र के निर्माण की अत्यन्त आवश्यकता है।

स्वामी जी शिक्षा के क्षेत्र में बालिकाओं को बालकों के समान शिक्षा देने के पक्ष में थे। इस प्रकार की शिक्षा व्यवस्था से वर्तमान में हो रहे बालिकाओं के प्रति उपेक्षापूर्ण व्यवहार को काफी सीमा तक रोका जा सकता है।

स्वामी जी के अनुसार शिक्षा से व्यक्ति का शारीरिक, मानसिक व आत्मिक विकास होना चाहिए, परन्तु आजकल की शिक्षा इस उद्देश्य को पूर्ण नहीं करती है। स्वामी जी के अनुसार उसे ही सच्ची शिक्षा कहा जाना चाहिए, जिससे चरित्र का गठन हो, मन का बल बढ़े, बुद्धि का विकास हो और मनुष्य स्वावलम्बी बने।

आजकल का परिवेश ऐसा है कि लोग अपने धर्म और धर्म में निहित सत्य को भूलते जा रहे हैं, जबकि धर्म के द्वारा ही व्यक्ति में आत्मविश्वास, आत्मश्रद्धा, आत्मनिर्भरता, आत्मत्याग, मानवता, सहयोग एवं प्रेम तथा विश्व-बन्धुत्व की भावना का विकास होता है। स्वामी जी ने इसके लिए धार्मिक शिक्षा को आवश्यक बताया है। उनके अनुसार धार्मिक शिक्षा पुस्तकों से नहीं वरन् व्यवहार, आचरण और संस्कारों द्वारा दी जानी चाहिए। विवेकानन्द चाहते थे कि प्रत्येक व्यक्ति उस सत्य अथवा धर्म को मालूम कर सके जो उसके अन्दर छिपा है।

शिक्षा एवं राष्ट्रीय एकता:

आज जबकि सम्पूर्ण राष्ट्रीयता तथा ‘‘वसुधैव कुटुम्बकम्’’ की भावना का विकास करना चाहिए। स्वामी जी के अनुसार - ‘‘जो शिक्षा देश भक्ति की प्रेरणा नहीं देती वह राष्ट्रीय शिक्षा नहीं कही जा सकती।’’[2] ‘‘वसुधैव कुटुम्बकम्’’ में स्वामी जी विश्वास करते थे। इस भावना का विकास वे विश्व-बन्धुत्व प्रदायी शिक्षा द्वारा करना चाहते थे। उनका विश्वास था कि इसी भावना के द्वारा विद्यार्थियों के मन में ये भाव जगाए जा सकते हैं कि चींटी से लेकर मानव तक सभी में एक-सी आत्मा विद्यमान है। विश्व के सभी जीव एक ही ईश्वर की सन्तान हैं। शिक्षा द्वारा वे यह बोध कराना चाहते थे कि ‘‘विश्व के प्रति हमारा बहुत बड़ा कर्तव्य है। हम उसके ऋणी हैं, वह हमारा ऋणी नहीं है। यह बड़े सौभाग्य की बात है कि हमें विश्व के प्रति कुछ करने का अवसर मिल सके।

सार्वभौमिक शिक्षा:

भारत की अनेक समस्याओं के मूल में यदि कोई समस्या है तो वह है अशिक्षा। आज भारत में सार्वभौमिक तथा जनशिक्षा की अत्यन्त आवश्यकता है जिसके बारे में स्वामी जी ने आज से

लगभग सौ वर्ष पूर्व ही सोच लिया था। स्वामी विवेकानन्द भारतीय जनता को अशिक्षित, पददलित एवं भूखी देखकर बहुत ही दुखी थे। उन्होंने ऐसी जनता की मूल आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु जनशिक्षा एवं सार्वभौमिक शिक्षा की महती आवश्यकता का अनुभव करते हुए लिखा है कि- "मैं जनसाधारण की उपेक्षा को महान राष्ट्रीय पाप समझता हूँ। यह हमारी अवनति का एक बड़ा कारण है। राजनीति की कोई भी यात्रा किसी काम की नहीं होगी जब तक कि भारत में जनसाधरण को फिर से अच्छी तरह शिक्षित नही किया जाता, अच्छी तरह भोजन नहीं दिया जाता और अच्छी तरह सुरक्षित नहीं किया जाता। यदि हम भारत को पुनः जीवित करना चाहते हैं तो हमें जनसाधरण के लिए कार्य करना चाहिए। स्वामी जी का दृढ़ विश्वास है कि यदि जनशिक्षा का सम्यक् ढंग से प्रचार एवं प्रसार किया जाएगा तो निश्चय ही भारत का नागरिक जगेगा, उन्नति करेगा और भारत का भविष्य उज्ज्वल बनेगा।"[3]

गुरु शिष्य का आत्मीय सम्बन्ध:

स्वामी जी ने प्राचीन गुरु-नमस्कार परम्परा को व्यापक रूप देते हुए "गुरु साक्षात परमेश्वर तस्मै श्री गुरुवे नमः" को "शिष्य, साक्षात् ब्रहम साक्षात् परमेश्वर तस्मै शिष्याय नमः गुरुवे नमश्च" के रूप में माना है। यही वेदान्तीय आदर्श है। इसमें गुरु और शिष्य दोनों को उच्च स्थान पर प्रतिष्ठित किया गया है। यहाँ दोनों के बीच आत्मीय और आध्यात्मिक सम्बन्ध दर्शाया गया है। इस प्रकार की स्थिति में जब गुरु विद्यार्थी से "त्वमसि" कहेगा तो विद्यार्थी इस बात की अनुभूति करने लगेगा कि "अहं ब्रहमास्मि" अर्थात् मैं स्वयं ब्रहम हूँ। ऐसी अनुभूति से उसमें आध्यात्मिक पूर्णता आएगी और उसे सच्चे ज्ञान की प्राप्ति होगी। स्वामी जी द्वारा अनुभूत ऐसे ही गुरु-शिष्य सम्बन्ध की आज महती आवश्यकता है।

स्वामी जी मनसा-वाचा-कर्मणा आत्मानुशासन के ही प्रबल समर्थक थे। वे गुरु एवं शिष्य दोनों में आत्मानुशासन को आवश्यक मानते हैं। उनका विचार था कि गुरु स्वयं अनुशासित रहें तभी व्यवहार से प्रभावित होकर छात्र भी अनुशासित रहेंगे। इनका यह अनुशासन वर्तमान सामाजिक और वैयक्तिक कल्याण का प्रबल सहायक सिद्ध हो सकता है।

नवयुवकों के लिए रोजगारपरक शिक्षा:

आज नवयुवकों के समक्ष सबसे मुख्य समस्या बेरोजगारी की है। नवयुवकों के पास विभिन्न शैक्षिक डिग्रियाँ होने पर भी रोजगार नहीं है। इसका हल स्वामी जी ने आज से लगभग सौ वर्ष पूर्व ही खोज लिया था। इस सम्बन्ध में स्वामी जी ने कहा है कि-"उच्च शिक्षा की बजाय यदि तकनीकी शिक्षा प्रदान की जाए, तो लोग उससे रोटी पा सकेंगे तथा नौकरी-नौकरी की चिल्लाहट से बचकर समाज में रचनात्मक योग दे सकेंगे।"[4] उनका यह कथन वर्तमान समय में भी कितना प्रासंगिक है।

पाश्चात्य देशों की उन्नति का प्रमुख कारण उन्होंने तकनीकी और औद्योगिक शिक्षा को माना है। वे भारत की प्रचलित शिक्षा-प्रणाली बदलकर उसके स्थान पर जीविकोपार्जन प्रदान करने वाली शिक्षा की व्यवस्था करना चाहते थे। उनके अनुसार वर्तमान शिक्षा व्यवस्था लोगों को नौकरीपरक व बेराजगार बना रही है। अतः उन्हें पाश्चात्य विज्ञान अर्थात् व्यावसायिक, तकनीकी, औद्योगिक तथा यांत्रिक शिक्षा दी जानी चाहिए। इससे भारतवासी आत्म-निर्भर बनेंगे तथा विश्व के विकसित देशों की भाँति अपना विकास कर सकेंगे।

एकाग्रता एवं शिक्षा:

स्वामी विवेकानन्द ने सच्ची शिक्षा की उपलब्धि हेतु मन की एकाग्रता को सर्वोत्तम माना है। एकाग्रचित व्यक्ति ही एकाग्रचित होंगे, उनकी शिक्षा ग्रहण शक्ति भी उतनी ही अध्कि स्थाई होगी। आज शिक्षा की दुर्दशा का मूल कारण शिक्षा-जगत् में एकाग्रता की कमी है। इसी के फलस्वरूप अनेक अनैतिक कार्यो-नकल, भ्रष्टाचार, छुरेबाजी आदि को बढ़ावा मिल रहा है और शिक्षा का स्तर दिन-प्रतिदिन गिरता जा रहा है।

स्वामी जी का नारी शिक्षा के प्रति विशेष बल:

स्वामी जी ने नारी शिक्षा की महती आवश्यकता बताकर उन्हें सजग एवं विवेकी बनाने का बीड़ा उठाया। उन्होंने प्रश्न उठाया कि जब वेदान्तों में यह प्रतिपादित है कि विश्व के प्रत्येक प्राणी में एक ही आत्मा का वास है वो फिर नारियों को हेय दृष्टि से देखने की बात कहाँ? उन्होंने अनुभव किया कि शारीरिक अन्तर होते हुए भी नर-नारी दोनो समान हैं। अतः समाज में दोनों की शिक्षा की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। यह बात आज भी समझी जा रही है कि नारी की शिक्षा की कितनी आवश्यकता है।

आज जब व्यक्ति, जीवन में भ्रान्ति और क्लेश से पीड़ित है, जब समाज- भ्रष्टाचार, दुराचार और अत्याचार की व्याधियों से ग्रस्त है, जब राजनीति मनुष्य के जीवन को उभारने सँवारने के बजाय नष्ट-भ्रष्ट कर रही है, जब विज्ञान मनुष्य की समृद्धियों को बढ़ाने के बजाय हवा, पानी तथा पृथ्वी पर जहर के बीज बो रहा है, तब हमें निश्चय ही इस बात का पूरी तरह चिन्तन एवं मनन करना होगा कि किस तरह हमें इस स्थिति से मुक्ति मिल सकती है। शिक्षा ही वह माध्यम है जिसकी सहायता से हम मानव को किसी विशेष दिशा में ले जा सकते हैं। इसलिए

वर्तमान परिस्थिति में स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक विचारों का अध्ययन आवश्यक चिन्तन बन गया है।

शिक्षा द्वारा सभी समस्याओं का समाधान:

शिक्षा के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए स्वामी जी ने कहा कि आज पाश्चात्य देशों की उन्नति का प्रमुख कारण शिक्षा ही है। शिक्षित व्यक्ति अपनी तमाम समस्याओं का समाधन स्वयं ही कर लेता है जबकि अशिक्षित व्यक्ति तमाम सुविधाओं से वंचित रह जाता है। इसलिए भारत वासियों की उन्नति हेतु शिक्षा की सर्वसुलभ व्यवस्था किए जाने की महती आवश्यकता है। स्वामी जी प्रायः कहा करते थे- "आज हमें आवश्यकता है- आध्यात्मयुक्त पाश्चात्य विज्ञान की।"[5] इस प्रकार वे मानवीय वेदान्त एवं पाश्चात्य विज्ञान का एक समन्वयवादी दृष्टिकोण उपस्थित करना चाहते थे। वे शिक्षा द्वारा विज्ञान और आनन्द की प्राप्ति करना चाहते थे। जिससे व्यक्ति की सर्वांगीण प्रगति हो सके। वे जीवन की भौतिक एवं आध्यात्मिक इन दो मौलिक समस्याओं को सुलझाना-शिक्षा का उद्देश्य मानते हैं। वेदान्त दर्शन द्वारा आध्यात्मिक एवं भौतिक मूल्यों के अद्भुत समन्वय का सुझाव प्रस्तुत किया। संक्षेप में वे मानव निर्माणकारी शिक्षा-दर्शन का प्रतिपादन करना चाहते थे।

चरित्र निर्माण में शिक्षा का योगदान:

वे शिक्षा द्वारा लोगों के चरित्र-निर्माण के पक्ष में थे क्योंकि एक चरित्रावान व्यक्ति अनुशासित एवं आत्मनिर्भर होता है। वे कहते थे- हमें ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है- जिससे चरित्र का निर्माण हो। स्वामी जी शिक्षा के माध्यम से लोगों का शारीरिक विकास करना चाहते थे। क्योंकि जो व्यक्ति शरीर से सबल है वह सब कार्य करने में सक्षम है। वह अपनी उन्नति कर सकता है और दूसरे की मदद भी। उनके अनुसार 'शरीरमाद्यं खलु ध्रम साधनम् तथा नायमात्मा बलहीनेनलभ्यः' अर्थात् धर्म साधना का आधार शरीर ही है, जो व्यक्ति शरीर से निर्बल है वह आत्मज्ञान नहीं कर सकता। इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वामी जी समाज के विभिन्न वर्गों की शिक्षा की उत्तम व्यवस्था देने वाले शिक्षाविदों में सर्वश्रेष्ठ हैं।

वेदान्त युक्त पाश्चात्य विज्ञान की शिक्षा:

पाश्चात्य देशों की भौतिक उन्नति से प्रभावित होकर स्वामी जी भारतीय नवयुवकों को धार्मिक शिक्षा के साथ पाश्चात्य विज्ञान की शिक्षा देकर उन्हें आर्थिक रूप से सम्पन्न बनाना चाहते थे। इस सम्बन्ध में उन्होंने कहा-"आज हमें आवश्यकता है वेदान्तयुक्त पाश्चात्य विज्ञान की।"[6] स्वामी जी पाठ्यक्रम के अन्तर्गत आध्यात्मिक भौतिक दोनों प्रकार के विषयों को रखना चाहते थे। आध्यात्मिक धार्मिक शिक्षा देने के सम्बन्ध में उनकी मान्यता थी कि-कोरी भौतिक अथवा लौकिक शिक्षा से व्यक्ति में मानवीय मूल्यों का ह्रास होता है, फलतः वह जड़ हो जाता है। दूसरा कारण यह है कि धर्म शिक्षा का मेरुदण्ड है तथा भारत की प्रमुख शक्ति है। अतः व्यक्ति को उदार बनाने तथा उनमें मानवीय मूल्य विकसित करने हेतु धार्मिक शिक्षा अवश्य दी जानी चाहिए। पाश्चात्य विज्ञान पढ़ाए जाने के सम्बन्ध में उनका तर्क था- भारत की प्रधान आवश्यकता है- रोटी। अतः यहाँ के लोगों को रोजगार परक शिक्षा देने के लिए उन्हें पाश्चात्य विज्ञान अर्थात तकनीकी, औद्योगिक एवं यांत्रिक शिक्षा दिए जाने की महती आवश्यकता है। इसलिए दोनों प्रकार के विषयों को पाठ्यक्रम में रखा जाना चाहिए। वे मातृभाषा के माध्यम से विषयों के पढ़ाने के पक्ष में थे क्योंकि निजी भाषा से सीखना सहज होता है। संस्कृत की शिक्षा इसलिए आवश्यक है क्योंकि उसमें हमारी संस्कृति की थाती निहित है। इसके साथ ही इस भाषा से व्यक्ति में शक्ति एवं क्षमता आती है। अंग्रेजी भाषा इसलिए पाठ्यक्रम में रखे जाने का सुझाव दिया क्योंकि यह भाषा पाश्चात्य विज्ञान सीखने में उपयोगी है। विभिन्न कलाओं की शिक्षा चरित्र-निर्माण एवं शारीरिक शिक्षा को भी पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग बनाया। तभी तो स्वामी जी द्वारा व्यक्त पाठ्यक्रम आध्यात्मिक, लौकिक, कलात्मक, रुचिकर, व्यावहारिक एवं उपयोगी है। संक्षेप में इसे सर्वांगपूर्ण पाठ्यक्रम कहा जा सकता है।

शिक्षा द्वारा जन सामान्य का उत्थान:

स्वामी जी ने राष्ट्रीय जीवन को सर्वश्रेष्ठ माना है। अतः शिक्षा द्वारा लोगों में राष्ट्रीय गुण विकसित करना चाहिए। राष्ट्रीय गुणों से युक्त व्यक्ति ही हँसते-हँसते अपने हृदय का रक्त देश के कल्याणार्थ बहा देने हेतु सदैव उद्यत रहता है। व्यक्ति में राष्ट्र भक्ति तथा देश भक्ति की भावना तब तक प्रबल न होगी जब तक उसकी अज्ञानता तथा गरीबी मिटाने हेतु शिक्षा की अनिवार्य व्यवस्था न हो। उन्होंने लोगों से राष्ट्रीय भावना विकसित करने हेतु रामकृष्ण मिशन, मठ, अद्वैत आश्रम आदि की स्थापना की। राष्ट्रीयता की भावना के साथ वे लोगों में मानवीय दृष्टिकोण भी विकसित करना चाहते थे। उन्होंने विश्व के लोगों में वेदान्त दर्शन के माध्यम से विश्व बन्धुत्व, विश्व मैत्री का प्रचार-प्रसार बहुजन सुखाय, बहुजन हिताय किया तथा उसे स्थायी स्वरूप देने हेतु वेदान्त सोसाइटी की स्थापना विश्व के कई देशों में की। स्वामी जी, जनसाधरण के लिए किस प्रकार की शिक्षा और शिक्षा की व्यवस्था चाहते हैं, इस सम्बन्ध में डॉ. कीर्ति देवी सेठ ने अपनी पुस्तक 'भारतीय शिक्षा दर्शन' में लिखा है- 'जनता को शिक्षित करने के लिए गाँव-गाँव, घर-घर जाकर ही शिक्षा देनी होगी। कारण यह है कि

गाँव के बालकों को जीविकोपार्जन हेतु अपने पिता के साथ खेत पर काम करने के लिए जाना पड़ता है। वे शिक्षा प्राप्त करने विद्यालय नहीं जा पाते हैं। इस सम्बन्ध में स्वामी जी सुझाव देते हैं कि यदि संन्यासियों में से कुछ को धर्मेत्तर विषयों की शिक्षा प्रदान करने के लिए संगठित कर लिया जाए तो बड़ी सरलता से घर-घर घूमकर वे अध्यापन तथा धार्मिक शिक्षा दोनों काम कर सकते हैं। कल्पना कीजिए कि दो सन्यासी कैमरा, ग्लोब और कुछ मानचित्रों के साथ संध्या समय किसी गाँव में पहुँचे। इन साधनों द्वारा वे जनता को भूगोल, ज्योतिष आदि की शिक्षा दे सकते हैं। इसी प्रकार कथा-कहानियों द्वारा दूसरे देश के सम्बन्ध में अपरिचित जनता को ये इतनी बातें बताते हैं जितनी वे पुस्तक द्वारा अपने जीवन भर में भी नहीं सीख सकते हैं। क्या इन वैज्ञानिक साधनों द्वारा आज की जनता के अज्ञानमय अन्धकार को शीघ्र दूर करने का यह एक उपयुक्त सुझाव नहीं है? क्या संन्यासी स्वयं इस लोक-सेवा द्वारा अपनी आत्मा की ज्योति को अधिक प्रदीप्त नहीं कर सकते हैं?' इस प्रकार स्वामी जी जन-शिक्षा के लिए संचार के इन साधनों के प्रयोग पर भी बल देते हैं।

शिक्षा में राष्ट्रवादी भावना:

आज भारत में शिक्षा मर्यादाहीन, स्वार्थी, इन्द्रिय लोलुपता प्रधान तथा धन को अत्यध्कि महत्त्व देने वाली बन गयी है। चरित्र, राष्ट्रभक्ति तथा आत्मविश्वास का गम्भीर अभाव है। शिक्षक और नेता शिक्षा को परम पुनीत समाजसेवी कार्य नहीं मानते हैं और उसे भी धन कमाने का व्यापार बना दिया गया है। एकता और परस्पर सौहार्द्र, सहानुभूति, सेवाभाव लुप्त हो गए हैं। प्रत्येक व्यक्ति ऊधर्वगामी सामाजिक गत्यात्मकता के पीछे भाग रहा है। दूसरों की भलाई की चिन्ता किसी को नहीं है। भारतीय शिक्षा की आत्मा आज मर चुकी है।

ऐसे मर्यादाहीन समाज में स्वामी विवेकानन्द के विचारों का बहुत अधिक महत्त्व है। उनको केवल दोहराने से ही लाभ नहीं होगा, उन पर अमल करना होगा। हमारे शिक्षा मन्त्रियों, शिक्षा प्रशासकों और शिक्षकों को उनसे शिक्षा लेनी चाहिए और ठोस जनहितकारी रचनात्मक कार्यक्रम शिक्षा जगत में चलाए जाने चाहिए।

यथार्थवादी दृष्टिकोण:

स्वामी विवेकानन्द ने ऐसी शिक्षा और व्यवस्था पर बल दिया है जिसमें आदर्शवाद और व्यावहारिक बुद्धि का सम्मेलन हो। उनके लिए शिक्षा बालक की पूर्णता को प्राप्त करने और देश का नव निर्माण करने के लिए आवश्यक है। स्वामी जी के शिक्षा दर्शन को हम पूर्ण रूप से आदर्शवादी कह सकते हैं। उनका विश्वास है कि मनुष्य के विकास की सीमा अनन्त है और शिक्षा उसको इस अनन्त की ओर ले जाने वाला साधन है। आदर्शवादी इस विचारधारा को स्पष्ट कर देते हैं किन्तु उनका आदर्शवाद, यथार्थवाद के साथ मिलता है। जब वह देश की समृद्धि के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करते हैं तो वह घोर यथार्थवादी दृष्टिकोण ही हमारे सामने रखते हैं।

स्वामी जी के विचारों से कुछ सन्यासियों, धर्मोपदेशकों को धार्मिक शिक्षा के साथ ही साथ सामान्य समाजोपयोगी, शिक्षा के लिए तैयार करना चाहिए ताकि वे समाज को उचित दिशा दे सकें। व्यावहारिक शिक्षा द्वारा समाज को अध्कि से अधिक शिक्षित किया जा सकता है।

शिक्षा में समन्वयवादी दृष्टिकोण:

स्वामी जी के शिक्षा दर्शन में एवं भारतीय शिक्षा दर्शन में समन्वय है या यह कहिए कि स्वामी जी भारतीय शिक्षा दर्शन से पूर्णरूपेण प्रभावित हैं। स्वामी जी ने चिन्तन एवं क्रिया दोनों के महत्त्व को अच्छी तरह समझा है। ज्ञान, कर्म एवं शक्ति का योग शैक्षिक प्रक्रिया में सहयोगी सिद्ध होता है।

स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा दर्शन में प्रकृतिवाद, आशावाद तथा प्रयोजनवाद आदि सभी मुख्य-मुख्य दार्शनिक विचारधराओं की झलक दिखाई पड़ती है। प्रकृतिवादियों की भाँति स्वामी जी ने बताया कि सच्ची शिक्षा प्रकृति के सम्पर्क में रहकर ही प्राप्त हो सकती है। आदर्शवादियों की भाँति उन्होंने बताया कि शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालक का आध्यात्मिक विकास करके उसके उस पूर्णत्व की अभिव्यक्ति करना है, जो उसमें पहले से ही विराजमान है। ऐसे ही प्रयोजनवादियों की भाँति स्वामी जी ने पाश्चात्य देशों की कला, उद्योग तथा तकनीकी शिक्षा की उपयोगिता को अपनी कला के साथ समन्वित करने का सुझाव प्रस्तुत किया।

संदर्भ सूची:

1. डॉ. रामशकल पाण्डेय, 'विश्व के श्रेष्ठ शिक्षा शास्त्री', पृ. 300
2. वही, पृ. 307
3. वही, पृ. 303
4. वही, पृ. 301
5. वही, पृ. 302
6. वही, पृ. 303

Corresponding Author

Soan Kiran Sharma*

Research Scholar, Sunrise University, Alwar, Rajasthan